आग और राख के बीच

मनोज रूपड़ा

आग और राख के बीच

उस आदमी के दुर्भाग्य और उसकी दुख भरी जिंदगी के बारे में किसी को कोई खास जानकारी नहीं है सिर्फ इतना मालूम है कि डेढ़-दो साल पहले एक अग्निकांड में सामूहिक रूप से झुलसे उसके परिवार को इस अस्पताल में लाया गया था। उनमें से दो बच्चों और उन बच्चों की माँ को कुछ ही घंटों बाद सफेद कपड़ा ओढ़ाकर वापस

भेज दिया गया था और वह बच गया था। हालाँकि उसने बचाने की कोशिश करते वक्त बचने की जरा भी कोशिश नहीं की थी, लेकिन दुर्भाग्य से वह बच गया था।

जिस दुर्घटना में उसने अपने परिवार को खो दिया था, उस दुर्घटना का कोई दृष्टांत यहाँ प्रस्तुत करना जरूरी नहीं है। हमारे संवेदनशील और सुप्रभावग्रहणशील अंतःकरण वाले पाठकों को यह मालूम है कि ऐसी घटनाएँ तो आए दिन होती ही रहती है। वे यह भी जानते हैं कि आत्मदाह अमूमन किन कारणों से होता है, लिहाजा उन कारणों की तफसील में जाने के बजाय हम उस बचे-खुचे अवशेष को केंद्र में ले रहे हैं, जो अब हमारा नायक है, जिसने मरने से साफ इनकार कर दिया था और अब तो उसके अंदर के न्यूनतम मनुष्य ने खुद को जीवित रखने के लिए असाधारण शक्तियाँ भी हासिल कर ली है।

इलाज के दौरान जिस अस्पताल में वह भर्ती था, वह एक सरकारी अस्पताल था। इलाज की जो छोटी-मोटी औपचारिकताएँ पूरी की जा चुकी थी, वह उसके शरीर के उन हिस्सों से संबंधित थी, जो झुलस गए थे। इलाज की प्रक्रिया हालाँकि गलत नहीं थी लेकिन इस बात पर किसी का ध्यान नहीं गया कि अपने जले हुए अंगों के प्रति वह बिल्कुल संवेदनहीन हो चुका है। उसका ध्यान कहीं और लगा रहता है वह न तो किसी से कुछ कहता, न किसी भी तरह के दर्द या तकलीफ का इजहार करता। कुछ ही दिनों में वह जड़ता की उस स्थिति में पहुँच गया, जहाँ पहुँचने के बाद कोई भी मरीज चीजों को चीजों की तरह नहीं देखता, बल्कि उसमें कुछ और देखने लग जाता है।

जिस वार्ड में उसे रखा गया था, उसमें दोनों तरफ बीस-बीस चारपाइयाँ थीं, जिसमें नीली धारीदार कमीजें और पजामा पहने मरीज लेटे रहते थे। वह उन मरीजों को और उसका इलाज कर रहे डॉक्टरों और नर्सों को या मरीज की देख-रेख में लगे उनके रिश्तेदारों को दिन भर बिना किसी वजह के यूँ ही देखता रहता था उसकी नजरें कभी किसी मरीज की चारपाई पर ज्यादा देर टिकी रहती तो कुछ देर तक सबको यह भ्रम होता था कि वह उस मरीज के बारे में कुछ जानना चाहता है। लेकिन कुछ ही देर में यह मालूम हो जाता था कि वह उसे सिर्फ देख रहा है, उसके बारे में कुछ सोच नहीं रहा है। उसका दिमाग अपने सामने चलती गतिविधियों के पार किसी दूसरी छवि की कल्पना में लगा है।

जब कोई नर्स उसके पास आती, उसकी नब्ज टटोलने या उसके सामने लटकती सलाइन में इंजेक्शन से दवाई डालने, तो वह उसे परे हटने का इशारा करता ताकि उस दृश्य को ठीक से देख सके जो नर्स के आड़े आ जान से बाधित हो जाता है।

एक बार एक नर्स ने यह जानने के लिए कि वह क्या देख रहा है, जब पीछे मुड़कर देखा, तो सोच में पड़ गई। सामने वाली चारपाई पर अभी-अभी एक मौत हुई थी। मरीज के कुछ नजदीकी रिश्तेदार बेसाख्ता फूट पड़े थे। वे भर्राई हुई आवाज में मृतक का नाम ले-लेकर चीख-पुकार मचा रहे थे। वार्ड का चपरासी उन्हें जल्द से जल्द बाहर निकालने और व्यवस्था को कायम रखने के प्रयास में चिल्लाए जा रहा था। लेकिन इस त्रासद दृश्य को देखते हुए हमारा नायक ऐसे हर्ष से भरा हुआ था जैसे फूला न समा रहा हो उसके चेहरे पर ऐसी चमक और खुशी थी, जैसे किसी बच्चे के जन्म पर होती है।

नर्स ने बहुत आश्चर्य से अपने मरीज का चेहरा देखा और नासमझी में सिर हिलाती हुई और होंठ बिचकाती हुई चली गई। नर्स के पास दरअसल ऐसी दृष्टि नहीं थी कि वह अपने मरीज के उस कल्पित दृश्य को देख सके, जो सामने दिखते हुए सत्य के पार घट रहा था।

मरीज का चेहरा अब भी उसी हर्षोत्कर्ष से छलछला रहा था। क्योंकि उसके सामने कोई लाश या मातम करते उसके रिश्तेदार नहीं, एक मजबूत और तंदुरुस्त स्त्री थी। अपने निर्वस्त्र कंधों पर बाल बिखराए वह अपने शिशु को स्तनपान करवा रही थी।

यह अभूतपूर्व छवि उसके मन मस्तिष्ट की गहराइयों में तब से थी, जब पहली बार उसकी पत्नी माँ बनी थी और पहली बार उसने स्तनपान का यह सुंदर दृश्य देखा था। लेकिन इस वक्त, जब वह दुख, पीड़ा और मृत्यु के भयावह माहौल में दिन गुजार रहा था, उसके सामने यह छवि क्यों उभर आई?

इस बात का कोई जवाब नहीं है। दुनिया में बहुत-सी ऐसी बातें होती है, जिसका कोई जवाब नहीं बन पाता।

दूसरे दिन जब वह उठा, तो बहुत विचलित था। कभी-कभी वह अचानक उठकर बैठ जाता और वार्ड में आने वालों को संदेह भरी नजरों से देखने लगता और कभी-कभी चादर से अपना मुँह ढँक लेता, जैसे किसी से अपना चेहरा छिपा रहा हो। खासतौर से पुलिस वालों को देखकर वह बेहद डर जाता था। एक नर्स बहुत देर से उसकी हरकतों को देख रही थी। वह उठकर उसके पास गई और उससे पूछा कि उसे क्या तकलीफ हैं? लेकिन वह उसका चेहरा देखता रहा जैसे उसे समझ में न आ रहा हो कि उससे क्या पूछा जा रहा है।

कुछ देर नर्स उसके चेहरे को देखती रही फिर इंचार्ज को बुला लाई। वह डॉक्टर बहुत अनुभवी था, उसने कुछ ही देर में मरीज के नए लक्षणों को पहचान लिया और व्यर्थ की औपचारिकताओं में समय बर्बाद करने के बजाय मेंटल वार्ड में फोन करके अपने वार्ड के उस मरीज के बारे में संक्षिप्त जानकारी दे दी।

एक घंटे बाद मेंटल वार्ड से दो जूनियर डॉक्टर आए, उन्होंने उस मरीज की रिपोर्ट की सरसरी तौर पर पढ़ने के बाद आपस में कुछ बातचीत की और नर्स को साथ लेकर उस मरीज के पास पहुँच गए।

हमारे सरकारी अस्पतालों में बीमारों की संख्या बहुत ज्यादा होती है और डॉक्टरों के पास समय बहुत कम होता है और जैसे दूसरे सरकारी महकमों में बीसियों सालों से जो कामचलाऊ पद्धतियाँ चली आ रही है, ठीक वैसे ही कुछ रूढ़ पद्धतियाँ सरकारी अस्तपालों में भी चलती आ रही है - वही घिसे-पिटे प्रश्न और वही पुराने नुस्खे। जबकि हमारा नायक ऐसे बचकाने प्रश्नों से बहुत आगे चला गया है, जो मानसिक रोग के शुरुआती लक्षणों को पहचानने के लिए किए जाते हैं।

एक डॉक्टर ने अपनी चार अँगुलियाँ उसे दिखाते हुए पूछा कि जरा बताओ तो ये कितनी अँगुलियाँ है? लेकिन मरीज अँगुलियों को देखने के बजाय अँगुलियों के बीच की खाली जगह को देख रहा था। साफ जाहिर था कि उसकी रुचि अब अंकों में नहीं सिर्फ शून्य में केंद्रित हो गई थी।

कुछ देर बाद दूसरे डॉक्टर ने अपनी कलाई घड़ी उसे दिखाते हुए पूछा, अच्छा जरा ये बताओ कि अभी कितना बजा है। मरीज ने घड़ी पर अपनी नजरें टिकाई लेकिन वह गुजरते हुए समय को नहीं, बीते हुए समय को देख रहा था। इतनी तेज निगाहों से, कि उसके ताप से कुछ ही देर में वह घड़ी पिघलने लगी।

कुछ देर तक दोनों डॉक्टर उसे देखते रहे फिर एक डॉक्टर ने नजरें उठाकर दूसरे डॉक्टर को देखा, दूसरे डॉक्टर ने होंठ सिकोड़ते हुए नाउम्मीदी में सिर हिलाया फिर दोनों वहाँ से चले गए मगर उनके जाने के बाद भी वह घड़ी वहाँ से हटी नहीं वह न केवल अपने निर्धारित आकार से बड़ी होती जा रही थी, बल्कि अत्यधिक ताप से पिघलने भी लगी, उस घड़ी के केंद्र में एक भयानक खलबली चल रही थी। उस खलबलाहट से निकलकर पहले कुछ बूँदें टप् टप् फर्श पर गिरी, फिर उन बूँदों ने धार का रूप ले लिया।

अब घड़ी की उस पिघलन को हम फर्श पर बहते देखते हैं। कुछ देर धीरे-धीरे आगे बढ़ने के बाद उस पतली धार ने बहते हुए लावे जैसी रफ्तार पकड़ ली। वार्ड के दरवाजे से बाहर निकलकर वह लावा गलियारे में आया तो गलियारे में अफरा-तफरी मच गई। कुछ वार्ड ब्वाय अपने हाथ के स्ट्रेचरों को छोड़कर भाग गए और मरीजों से मिलने आए उनके सगे-संबंधी घबराकर दीवारों से चिपक गए।

फिर वह लावा अस्पताल के अहाते में आया और अहाते में उगी घास-फूस को जलाते हुए बाहर शहर की मुख्य सड़क पर निकल आया और बेकाबू होकर तूफानी रफ्तार से बहने लगा, हर उस चीज से टकराता और उसे झुलसाता हुआ, जो उसकी जद में आ रही थी।

शहर की भीड़-भाड़ वाली सड़क पर अब ठीक वैसा ही मंजर था, जैसा उस वक्त दिखाई देता है, जब कोई शहर किसी भीषण त्रासदी से गुजर रहा होता है।

शहर की शानदार रिहाइश को पार करते हुए और बहुमंजिली इमारतों पर काली राख का बवंडर छोड़ते हुए वह लावा शहर के पिछवाड़े में पहुँच गया, जहाँ एक विशाल स्लम था।

स्लम की पतली, दुर्गम और दयनीय गलियों से गुजरते वक्त उस लावे ने अपने फोर्स, अपने ताप और अपने फैलाव को नियंत्रित कर लिया। वह लगातार सिकुड़ता और ठंडा होता गया और उस जगह पर जाकर ठहर गया, जहाँ एक जली हुई झोंपड़ी के अवशेष पड़े थे। मलबे के ढेर से उठती धुएँ की अंतिम, महीन महीन परतों को वह खला में गुम होते हुए देखता रहा।

उस दृश्य से मरीज का ध्यान कुछ क्षणों के लिए तब हटा, जब नर्स ने उसके कंधे को थपथपाया और दवाई की तीन गोलियाँ उसके हाथ में थमा दी। उसने नर्स के हाथ से पानी का गिलाब लिया और गोलियाँ निगलने के बाद फिर से अपनी जली हुई झोंपड़ी को देखने लगा। फिर उसने नापसंदगी जाहिर करते हुए सिर हिलाया और उस जली हुई झोंपड़ी को अपने सामने से हटा दिया और अपनी उस सजीव झोंपड़ी को उसने उसी रूप में फिर से खड़ा कर दिया, जिस रूप में वह जल जाने से पहले थी।

झोंपड़ी में जीवन की हलचल को लाने में भी उसे ज्यादा वक्त नहीं लगा। उसने देखा कि वह एक परोसी हुई थाली के सामने बैठा है। उसकी पत्नी रोटी बना रही है, उसका बेटा अपनी माँ के कंधे पर बाँहें डालकर झूल रहा है। माँ की गोद में एक छोटी-सी बच्ची भी है माँ अपना होंठ गोलकर के मुँह से सीटी बजा-बजाकर अपनी नन्हीं

बिटिया को बहला रही थी और चकले पर रोटी बेलते हुए और तबे पर उसे सेंकते हुए बड़े बेटे की शैतानियों से तंग होकर उसे डाँट भी रही थी।

उस दृश्य में एक अलग तरह की आभा थी। वह स्थायी रूप से मन में बसाए रखने लायक दृश्य था। मगर कुछ देर बाद वह दृश्य उसके सामने से धुँधला पड़ने लगा। कुछ ऐसे, जैसे वह कुछ पलों के लिए निद्रा में चला गया हो। उसने एक बार सिर झटककर खुद को थोड़ा सजग किया और उस दृश्य को फिर से सामने लाने की कोशिश की लेकिन वह गड़बड़ाया हुआ दृश्य पकड़ में आने के बजाय और अधिक तेजी से विरूपित होता चला गया।

फिर कुछ देर बाद उसे सफेद पार्श्व में एक साथ कई चेहरे दिखाई दिए। वे सब जाने-पहचान पड़ोसी चेहरे थे और सारे के सारे चेहरे स्तब्ध थे। उन चेहरों पर जलती हुई लपटों की रौशनी थरथरा रही थी। फिर उन स्तब्ध चेहरों से नजर हटाकर उसने झोंपड़ी के खुले दरवाजे से भीतर झाँका, जहाँ लपटों से घिरी वही औरत दिखाई दी अपने दोनों बच्चों को बाँहों में भींचे वह चुपचाप जल रही थी।

फिर सब कुछ तेजी से चकराने लगा। संज्ञाहीन होने का समय इतना क्षणिक था कि उसे दो सेकेंड की मोहलत भी न मिली और बेहोशी की काली चादर उसके सामने आ गई।

ये उन नई दवाओं का असर था, जो मेंटल वार्ड से आए डाक्टरों ने भिजवाई थी। इन अवसादरोधक दवाओं ने उसे कुछ ही देर में गहरी नींद में सुला दिया और सारे दिमागी उलझावे और बनते-बिगड़ते वसवसे भी खला में खो गए।

लेकिन दूसरे दिन से उसकी व्यग्रता में कमी आने के बजाय और अधिक उबाल आ गया। नींद से जागते ही वह ऐसे आश्चर्य से चीजों को देखने लगा जैसे लंबी बेहोशी के बाद होश में आया हो। वह अधीरता से सिर हिलाते हुए वार्ड के अन्य मरीजों को देखता रहा, जैसे उसे समझ में न आ रहा हो कि ये सब कौन हैं और उसे यहाँ क्यों लाया गया है।

फिर वह अचानक उठा और बेचैनी से अपने शरीर का मुआयना करने लगा। उसने पहले अपने बाएँ हाथ को देखा, फिर दाएँ हाथ को। फिर अपने चेहरे पर हाथ फिराया, गर्दन झुकाकर शरीर के निचले हिस्से को देखा। जगह-जगह चिपकाई गई पट्टियों को देखकर उसे थोड़ी असहजता महसूस हुई और उसने शरीर के विभिन्न हिस्सों में लगाई गई पट्टियों को उखाड़कर फेंकना शुरू कर दिया। यह एक ऐसी अवस्था है, जो

दर्द की चरमसीमा के बाद आती है और उसके बाद किसी भी तरह का दर्द महसूस नहीं होता, संभवतः यही वह क्षण होता होगा, जब कोई पीड़ित अपनी सोच और अपने आचरण पर नियंत्रण खो देता है।

उसे नियंत्रित करने के प्रयास औपचारिक रूप से हालाँकि जारी थे, लेकिन कुछ ही दिनों में यह तै हो गया कि अब यह वार्ड उसकी जहनी मशक्कत के लिए छोटा पड़ रहा है बल्कि वह अस्पताल में रहने लायक नहीं रह गया है, और चूँकि व्यक्तिगत रूप से उसकी देखभाल करने वाला इस दुनिया में कोई नहीं था, इसलिए उसे खुला छोड़ देने के अलावा कोई चारा भी नहीं था।

अगर वह एक लावारिश पागल होने के बजाय कोई मवेशी होता तो शायद उसकी स्थिति कुछ बेहतर होती। क्योंकि मवेशी के लिए तो फिर भी यह सुविधा है कि किसी काम के न रह जाने पर उन्हें सम्मानपूर्वक बूचड़खाने में ले जाया जाता है और उस यंत्रणा से उन्हें मुक्ति मिल जाती है, जो ऐसी स्थिति में जीवित रहने के कारण उन्हें भुगतनी पड़ती।

वह कब अस्पताल से बाहर निकल गया यह किसी को मालूम नहीं। अब उसके ऊपर किसी भी तरह का नियंत्रण नहीं था, लेकिन कहीं भी चले जाने की खुली छूट के बावजूद वह अस्पताल के इर्द-गिर्द मंडराता रहता था। खासतौर से अस्पताल के पिछवाड़े का वह फैला उजाड़, जहाँ कोई आता-जाता नहीं था, अब उसका स्थायी अड्डा बन गया था, उसके पागलपन में कोई आक्रामकता नहीं थी और उसकी बड़बड़ाहट इतनी लाउड नहीं थी कि किसी को कोई तकलीफ हो। लेकिन उसकी एक आदत ऐसी थी, जिसके कारण कालोनी की नर्सें कभी-कभी हाय तौबा मचाने लगती थी। वह अस्पताल के पीछे फेंके जाने वाले खून-मवाद से सने रुई के फाहों, पट्टियों और बेंडेज को बटोरता और उसमें आग लगा देता था। फिर वह आग से मुखातिब होकर पता नहीं क्या-क्या बातें करता रहता था। आग की रोशनी में उसका चेहरा और भी भयानक लगता। जब आग बुझने लगती, तो वह और ज्यादा बेचैन हो जाता। वह इधर-उधर किसी भूखे जानवर की तरह नजरें दौड़ाता और जो कुछ भी जलाने लायक चीज नजर आती, उसे उठाकर आग के हवाले कर देता, एक बार तो उसने क्वार्टर के पीछे की खिड़कियों से पर्दे भी खींच फाड़कर आग में झोंक दिए थे।

वह दिन भर शहर की गलियों में भटकता रहता और न जाने क्या-क्या बटोर लाता। गत्ते के बक्से, फलों की टोकरियाँ और पेटियाँ, रद्दी अखबार, कपड़ों और बारदानों के

चिथड़े, प्लास्टिक की थैलियाँ कैरी बैग्स, डिस्पोजल प्लेटें और गिलास, बिस्लरी की बोतलें फटे-पुराने जूते चप्पल, रबर की ट्यूब और टायर...

इन सब चीजों की मिली-जुली आग से उठने वाला धुआँ इतना कसैला, इतना काला और बदबूदार होता था कि कोई इसके इर्द-गिर्द फटकने की हिम्मत नहीं करता था। उस काले धुएँ ने उसके पूरे शरीर पर और क्वार्टर के पिछवाड़े की दीवारों पर इतनी कालिख चढ़ा दी थी कि दूर से देखने पर वह जगह किसी श्मशान जैसी दिखती थी - एक ऐसा श्मशान जहाँ मानवीय देह का नहीं, समाज द्वारा त्याग दी गई चीजों का अग्नि दाह होता था।

शुरू शुरू में उनकी इन हरकतों के खिलाफ नर्सों ने और उसके घर वालों ने बहुत कड़ी कार्रवाई की थी क्योंकि उसका यूँ आग से मुखातिब होकर बड़बड़ाना बहुत दहशतनाक था, और दूसरी वजह यह थी कि काले धुएँ ने धीरे-धीरे उनके घरों के अंदरुनी हिस्सों में भी कालिख पोतनी शुरू कर दी थी। लेकिन बार-बार आग में पानी डालने और कई बार डाँट डपटकर भगाने के बावजूद जब उसने वहाँ आना और आग लगाना बंद नहीं किया तो, हारकर नर्सों ने क्वार्टर की वे तमाम खिड़कियाँ हमेशा के लिए बंद कर दी, जो पिछवाड़े की तरफ खुलती थी।

उसका हुलिया, हरकतें और मुखमुद्राएँ वाकई खौफनाक थीं, कंधे तक झूलते बाल, जो आपस में चिपककर जटाओं में बदल गए थे। दाढ़ी के घुंघराले वालों में धूल और मैल स्थायी रूप से बस गए थे, चेहरे का बायाँ हिस्सा जलने के कारण बिल्कुल सपाट और भावशून्य हो गया था। छाती की चमड़ी पूरी सफेद हो गई थी बाएँ हाथ की दो अँगुलियाँ आपस में चिपककर एक हो गई थी। दाएँ कंधे पर मांस पिघलकर एक लोंदे की शक्ल में जमा रह गया था। धुआँ और जलन बर्दाश्त करते-करते उसकी आँखें हमेशा के लिए लाल हो गई थीं। ऐसा लगता था कि वे आँखें नहीं, दो छोटे-छोटे घाव हैं, जिसमें से कभी भी खून टपक सकता है।

लेकिन उसे अपने चेहरे की भयानकता और उन तकलीफों की जरा भी सुध नहीं थी। वह हमेशा सिर झुकाए अपने काम में लगा रहता। गंदी और बदबूदार चीजों का जलता ढेर दूसरों के लिए भले ही घृणित और दहशतनाक हो मगर उसके लिए वह एक यज्ञ था। आग के सामने वह ऐसे खड़ा रहता जैसे कोई तपस्वी बहुत बड़ी सिद्धि प्राप्त करने के लिए साधना में जुटा हो।

कुछ साल यूँ ही बीत गए। इस बीच उसके विकराल बालों में जुएँ पड़ गई थीं बाएँ पैर के टखने में एक नया घाव हो गया था। मक्खियों का झुंड हर वक्त उस घाव पर मंडराता

रहता था। शरीर के कई अलग-अलग हिस्सों और गुप्तांग में भयानक खुजली हो गई थी। अपने मैल से भरे लंबे नाखूनों से वह कभी अपने सिर के बालों को तो कभी शरीर के विभिन्न खुरदरे खारिशजदा हिस्सों को खुजाता रहता।

सुबह होते ही वह रोज अस्पताल के पिछवाड़े से बाहर निकल आता। कंधे पर एक खाली बोरी टँगाए और हाथ में एक छड़ी लिए हुए वह चुपचाप चलता रहता। रास्ते में पड़ने वाले कूड़े के छोटे-बड़े ढेर को छड़ी से कुरेदकर वह हर उस चीज को बोरे के खुले मुँह में डाल देता, जो जलाने लायक हो। जब बोरे का पेट भर जाता तो उसे कंधे से नीचे उतारकर उसका मुँह रस्सी से बाँध देता। फिर थोड़ी देर कहीं सुस्ताने के लिए बैठ जाता। आराम के उन क्षणों में वह शहर की गतिविधियों को और तेजगति से चलते निर्माण कार्यों को कुछ देर देखता रहता। फिर अपने आप से बातें करने लगता, कभी-कभी ये बातें बहुत संक्षिप्त और हल्की-फुल्की होती थी और बहुत जल्द समाधान हो जाता था पर कभी-कभी उसे किसी और को समझने के लिए बहुत विस्तार में भी जाना पड़ता था।

जब दोपहर ढल जाती तो वह अपनी पतलून की जेब से प्लास्टिक की थैली निकालता और बोरा पीठ पर लादकर चल पड़ता। अब उसे जगह-जगह रुकने और कुछ कुरेदने-खोजने की कोई जरूरत नहीं पड़ती थी। वह सीधे उस इलाके की तरफ चल पड़ता, जहाँ एक साथ कई रेस्तराँ एक-दूसरे के आस-पास या आमने-सामने खड़े थे। हरेक रेस्तराँ के पीछे एक दो चक्के वाली कचरा गाड़ी खड़ी रहती, उस हाथ गाड़ी में एक फाइवर का ड्रम पड़ा रहता था जिसमें अधखाई प्लेटों का बचा हुआ खाना उँड़ेल दिया जाता।

उन व्यंजनों में हालाँकि बहुत विविधता होती थी लेकिन वह स्वभाव से ज्यादा चूजी नहीं था इसलिए अलग-अलग चीजों को चुनने में वक्त बर्बाद करने के बजाय वह उस ड्रम में हाथ डालकर उस मिले-जुले ब्रेकफास्ट और लंच को अपनी प्लास्टिक की थैली में भर लेता।

वापस लौटते समय उसे रास्ते में एक पान ठेले पर थोड़ी देर रुकना पड़ता था। बीड़ी और माचिस के लिए। सिर्फ यही दो चीजें थी, जिसके लिए उसे दुनिया के सामने हाथ फैलाना पड़ता था। और सिर्फ यही दो चीजें थी, जिसकी जरूरत ने उसे इस मानवीय दुनिया से जोड़े रखा था। जब तक बीड़ी और माचिस खरीदने लायक पैसों की भीख उसके हाथ में न आ जाती तब तक उसे किसी न किसी तरह जन-जीवन के संपर्क में रहना पड़ता।

हर शाम की तरह उस शाम भी वह शहर से ढेर सारी चीजें बटोर कर लाया था। अपने दहन-स्थल के पास जाकर उसने अपना बोरा जमीन पर रख दिया और खुद भी जमीन पर बैठ गया। कुछ देर वह ढलते सूरज और पेड़ों की तरफ लौटते परिंदों को देखता रहा फिर प्लास्टिक की उस थैली को उठा लिया जिसमें रोटी-सब्जी-चावल इडली-बड़ा, सलाद के कतले, मुर्गी की अधवाई टाँगें गोश्त की बोटियाँ और गाढ़ा लसलसा सालन भरा हुआ था।

ये चीजें चाहे जैसी भी हों और चाहे जहाँ से भी आई हों, फिलहाल उसका वास्ता उसके पेट से था, जिसमें इन चीजों को हड्डियों समेत उदरस्थ कर लेने का जबरदस्त माद्दा था। उसने अपने आहार को कृतज्ञता भरी नजरों से देखा और उसके प्रति आभार प्रकट करते हुए उसे खाने लगा। साफ जाहिर हो रहा था कि उसके दिमाग में उस वक्त कोई उलझन नहीं थी। उसने उतने ही इत्मीनान से भोजन ग्रहण किया जितने इत्मीनान की उस वक्त जरूरत होती है।

फिर उसने हर रात की तरह उस रात भी अपने बोरे को उलट दिया। अपनी जेब से उसने बीड़ी और माचिस निकाली। पहले बीड़ी जलाई फिर उसी जलती हुई तीली से उन सब चीजों के ढेर में आग लगा दी, जिसे वह बोरे में बटोर लाया था। कुछ देर बाद जब लपटें उपर उठनी शुरू हो गई, तो आग के साथ उसने उसी अंदाज में बातचीत शुरू कर दी, जो बिना किसी भूमिका के शुरू होती थी और तब तक जारी रहती थी जब तक आग बुझ न जाए। कभी-कभी अपनी बात को जारी रखने के लिए उसे फूँक-फूँक कर आग को भड़काने की भी जरूरत पड़ जाती थी।

उसकी बातें हालाँकि इतनी साफ सुथरी और खुलासेवार नहीं होती कि हम सीधे-सीधे कोई मतलब निकाल सकें हम सिर्फ उन शब्दों के आधार पर कुछ अनुमान लगा सकते हैं, जो शब्द उनकी बड़बड़ाहट के दौरान बार-बार दोहराए जाते हैं

उस रात उसकी बातों में उसके बेटे और उसकी बूढ़ी माँ का जिक्र बार-बार आ रहा था और साथ ही साथ उन बीमारियों का, जिसने उसकी आमदनी को झकड़ लिया था। वह समझ नहीं पा रहा था कि पहले बच्चे के निमोनिया का इलाज करना ठीक रहेगा या गाँव से आई माँ के डायरिया का।

उसने अपनी महने भर की पगार को एक बार फिर गिना, उसमें से आधे रुपयों को राशन के लिए अलग के पैंट की दाईं जेब में रखा। फिर कुछ रुपयों को सबकी नजरें बचाकर अपनी अंटी में छुपा दिया फिर बची हुई पूँजी को दो बराबर की बीमारियों में बाँट दिया। कुछ देर तक उसे यह इत्मीनान रहा कि उसने बिल्कुल ठीक काम किया

है। लेकिन एक बार फिर वह सोच में पड़ गया, कुछ देर तक वह सिर खुजाता रहा फिर उसने बच्चे के निमोनिया में कटौती कर माँ के डायरिया में पैसे लगाए फिर उसने डायरिया की कुछ दवाओं में कटौती कर दी और निमोनिया में की पूरी दवाएँ एक साथ खरीदने का इरादा बनाया, लेकिन अगले ही पल उसे अपने फैसले को बदलना पड़ा। कुछ देर तक वह दोनों हाथों से सिर खुजाता रहा फिर फूँक मार मार खुझी हुई आग को जिंदा करने की कोशिश की फिर वह एकदम से झुँझला गया और अपनी छड़ी से राख के ढेर को बिखरे दिया।

दूसरे दिन सुबह उठते ही वह इधर-उधर चक्कर लगाने लगा, कुछ इस तरह कि, जैसे उसे अंदर ही अंदर कुछ हो रहा हो। दिमागी तौर पर उसे जल्दी से कुछ समझ में नहीं आता था कि उसके साथ क्या हो रहा है लेकिन उसके सहज-बोध ने अभी तक उसका साथ नहीं छोड़ा था। कुछ देर बाद उसने अपने उभरे हुए पेट को दोनों हाथों से थाम लिया फिर वह उसे दबाने और मसलने लगा। अगले ही पल, जैसे उसे कुछ समझ में आ गया हो, उसने निर्णायक ढंग से अपना सिर हिलाकर बालों को पीछे हटाया और अपनी पतलून नीचे उतारकर उकड़ूँ बैठ गया। कुछ देर तक तनाव और एकाग्रता का भाव उसके चेहरे पर बना रहा फिर उसके नितंबों के नीचे से मल निकलना शुरू हुआ और निकलता ही गया। उस मल में अपच के शिकार किसी बीमार आदमी के पेट से निकलने वाली चिरकन नहीं थी। उसने लंबे-लंबे चार शानदार लेंड़े निकाले और किसी जानवर जैसी सहजता के साथ उठ खड़ा हुआ।

फारिग होने के बाद उसने आगे बढ़कर अपना बोरा और छड़ी उठा ली। अब वह अपने अड्डे से निकलकर शहर की तरह जाने की तैयारी कर रहा था। अहाते की दीवार के पास जाकर उसने अपने दाएँ पैर के टखने को कपड़े की पट्टी से लपेटकर अच्छी तरह बाँध दिया फिर एक पैर में केनवस का जूता और दूसरे पैर में चमड़े का जूता पहन लिया। जूते के फीतों को अच्छी तरह बाँधने के बाद उसने अपने पेंट को भी कमर पर अच्छी तरह रस्सी के टुकड़ों से बाँध लिया। एक बार फिर बोरी और छड़ी को हाथ में लेकर वह अहाते के उस टूटे हुए हिस्से की तरफ बढ़ा, जो अहाते में आने-जाने का उसका निजी रास्ता था। लेकिन बाहर निकलने से पहले उसे फिर कुछ याद आ गया वह मुड़कर वापस आया, उसने इधर-उधर नजरें दौड़ाई और कुछ कदम आगे बढ़कर प्लास्टिक की उस थैली को उठा लिया, जिसमें कल वह अपना आहार उठा लाया था।

उस थैली को हाथ में लेकर वह आगे बढ़ा और ठीक वहाँ पहुँच गया, जहाँ उसने अभी-अभी चार लेंड़े छोड़े थे। कुछ देर वह सोचता रहा फिर उसने अखबार का एक टुकड़ा उठाकर उन लेंड़ों के ऊपर रखा। थैली में फूँक मारकर उसमें जगह बनाई और

बिना किसी उद्देश्य के बिल्कुल अनियोजित ढंग से उन लेंड़ों को उठाकर अपनी थैली में डाल दिया।

कुछ देर बाद वह शहर की सड़कों पर भटकता दिखाई दिया। टखने में लगी चोट के बावजूद वह बहुत तेजी से चल रहा था जैसे वह किसी खास मकसद से निकला हो।

खुदरा बाजार की अधिकांश दुकानें अभी बंद थी। सड़कों पर कुछ सफाई कर्मचारी हाथ में लंबे डंडे वाला झाड़ू लिए सफाई में जुटे थे। कुछ देर बाद एक के बाद एक दुकानें खुलने लगी। शहर के उस पुराने हिस्से को पार करते हुए वह अब उस तरफ मुड़ गया जहाँ नया शहर बहुत तेज रफ्तार से विकसित हो रहा था। वहाँ एक से बढ़कर एक माल्स और मल्टीफ्लेक्स थे और उनके डिस्प्ले जोन मनभावन चीजों से सजे थे। लोग हाथों में कैरिबैग लिए माल असबाब से लैस जोश में घूम फिर रहे थे। चारों तरफ सब कुछ खिला-खिला सा था। नई-नई प्रविधियाँ जीवन का स्वास्थप्रद रस निकाल रही थी। काँच की दीवारों के पीछे फूड जोन में कई तरह के देशी-विदेशी व्यंजन परोसे जा रहे थे। मगर हमारा नायक अपने गू के लेंडे हाथ में लिए इन सब चीजों के बीच से ऐसे गुजर गया जैसे उन चीजों का उसके लिए रत्ती भर भी महत्व न हो।

लग तो ऐसा रहा था, जैसे वह किसी पूर्व निर्धारित और बड़े लक्ष्य की तरफ बढ़ता चला जा रहा है और कोई बड़ी जीत हासिल करके ही वापस लौटेगा लेकिन शाम को जब वह वापस अपने अड्डे पर पहुँचा तो कुछ ज्यादा ही बेहाल नजर आ रहा था। उसके चेहरे पर एक और ताजा जख्म उभर आया था। सामने के दो दाँत नदारद थे। जबड़ा सूजा हुआ था। दाढ़ी और सिर के बाल खून से सने हुए थे कमीज और पतलून की हालत देखकर यह अंदाजा लगाना मुश्किल नहीं था कि उसे जमीन पर काफी दूर तक घसीटा जा चुका है।

लेकिन इतना सब हो जाने के बावजूद उसने अपने बोरे और अपनी छड़ी पर पकड़ बनाए रखी थी। और वह बोरा आज भी उतना ही भरा हुआ था। लेकिन जख्मों से होने वाले दर्द, डर या पता नहीं किस मानसिक तनाव के कारण वह उस शाम और दिनों की अपेक्षा बहुत ज्यादा व्यथित नजर आ रहा था। तकलीफ इतनी ज्यादा थी कि वह एक जगह खड़ा नहीं रह पा रहा था। अस्पताल के पास वाली सड़क से जब भी कोई आहट होती, वह हड़बड़ाकर चारदीवारी की ओट में छुप जाता। फिर हाथ में पत्थर उठाकर सड़क की तरफ ऐसे झाँकता, जैसे घात लगाकर बैठा कोई हमलावर झाँकता है। लेकिन जैसे ही सड़क से किसी भारी वाहन के गुजरने की आवाज आती, वह डर से

थरथराने लगता। पत्थर उसके हाथ से छूट जाता और वह कोने की तरफ भागकर दीवार से पीठ टिकाए साँस रोककर खड़ा हो जाता।

देर रात तक यही क्रम चलता रहा। वह कुछ देर तक अँधेरे में आँखें गड़ाए भयानक नाराजगी से कुछ देखता रहता, फिर तैश में आकर पत्थर उठा लेता और चारदीवारी की तरफ कदम बढ़ाता, मगर अगले ही पल हड़बड़ाते हुए वापस आकर कोने में छुप जाता।

उस रात वह आग के साथ कुछ इस तरह फुसफुसाते हुए बातें कर रहा था, जैसे उसे किसी बहुत बड़े षड्यंत्र का भेद मिल गया हो हर दो-तीन मिनट के बाद वह चौंककर पीछे पलटता और चौकन्नी नजरों से चारों ओर देखने के बाद फिर फुसफुसाने लगता।

कुछ देर बाद वह मुड़ा, उसे शायद किसी ऐसी चीज की जरूरत थी, जो धीमी पड़ती आग को थोड़ा और तेज कर दे जमीन से कुछ उठाने के लिए वह झुका, उसे उठाने के बाद दीवार पर पड़ती अपनी परछाई को देखकर वह एकदम स्थिर हो गया। परछाई तो रोज दीवार पर पड़ती थी मगर इससे पहले उसने अपनी परछाई को इतने करीब से और इतने ध्यान से देखा नहीं था। वह एक बार फिर डर गया, मगर बिल्कुल स्थिर खड़ा रहा जैसे उसे इस बात का डर हो कि वह जरा भी हिलेगा-डुलेगा तो सामने वाले को यह मालूम हो जाएगा कि वह एक इनसान है। वह सामने वाले को यह आभास दिलाना चाहता था कि वह तो सिर्फ एक वस्तु है - एक निर्जीव वस्तु, जिसका इस दुनिया से और दुनिया वालों से कोई वास्ता नहीं है।

लेकिन यह स्थिरता ज्यादा देर तक कायम न रही। उसके दिमाग में फिर एक खतरनाक जुंबिश हुई और वह दीवार पर लरजती परछाई के लिए पत्थर खोजने लगा। फिर उसने आगे बढ़कर एक पत्थर उठा लिया। उसकी परछाई ने भी साथ ही साथ पत्थर उठाया और जब उसका पत्थर वाला हाथ ऊपर उठा, तो परछाई ने भी वही हरकत दोहराई। यह देखकर वह अचंभित रह गया जैसे उसे इस हरकत की बिल्कुल उम्मीद न हो। अगले ही पल वह बुरी तरह झुँझला उठा, और तनाव की वही हालत, जो शुरू से उसे यातना देती आ रही थी न केवल फिर से लौट आई, बल्कि और अधिक उग्र हो गई।

सुबह अस्पताल के पिछवाड़े की दीवार का वह हिस्सा बुरी तरह से उघड़ा हुआ दिखाई दिया, जिस हिस्से पर उसकी परछाई पड़ रही थी।

लेकिन अब उसका ध्यान दीवार के उस उघड़े हुए हिस्से पर नहीं था। वह अहाते की दीवार से पीठ टिकाए अपनी दोनों टाँगें पसारे बिल्कुल निढाल होकर बैठा था। सुबह की ताजा बयार उसके सिर और दाढ़ी के बालों को न जाने कब से सहला रही थी। सूरज की चमकती किरणों से उसका चेहरा आलोकित हो चुका था। आसमान में परिंदों की परवाज और उसका चहचहाना जारी था। दो चार मक्खियों ने भी अब उसके सिर के पिछले भाग में और घुटनों तथा कोहनियों के ताजा जख्मों पर अपनी दिनचर्या शुरू कर दी थी। लेकिन वह हवा के झोंको, परिंदों की उड़ान या उसकी चहचहाहट या मक्खियों की भनभनाहट से बिल्कुल बेनियाज था। उसका ध्यान कुछ कदम के फासले पर उस जगह पर था, जहाँ कव्वों का एक झुंड चोंच मार-मारकर किसी मरी हुई चीज के टुकड़े-टुकड़े कर रहा था। वह मरी हुई चीज या तो बिल्ली का बच्चा होगा या कुत्ते का पिल्ला या कोई मोटा चूहा या कोई अर्धविकसित भ्रूण। वह चीज चाहे जो कुछ भी होगी फिलहाल टुकड़े-टुकड़े में विभक्त हो जाने के कारण उसने अपनी असली पहचान खो दी थी।

"यह तरीका ठीक नहीं है।' सहसा उसने अपनी छड़ी उठा ली और उठ खड़ा हुआ। वह लंगड़ाते हुए आगे बढ़ा और अंधाधुंध छड़ी चलाने लगा। उसकी इस हरकत से परेशान होकर कव्वे वहाँ से उड़ गए और अहाते की मुंड़ेर पर जा बैठे जिन कव्वों की चोंच भरी हुई थी वे उसे चुपचाप देख रहे थे और जिन्हें कुछ नहीं मिला था वे शिकायत भरी मुद्रा में काँव-काँव कर रहे थे।

एक कव्वे की चोंच में किसी बच्चे की नाल थी। उस लंबी नाल को हड़पने के लिए जब दूसरे कव्वे उस पर झपट पड़े तो वह कव्वा चोंच में नाल दबाए शहर की तरफ उड़ गया।

वह कुछ देर सिर उठाए उस कव्वे को देखता रहा। फिर उसने बहुत नकारात्मक ढंग से सिर हिलाया, "साले हमारी... कभी नहीं सुधरेंगे..."

कुछ देर वह यूँ ही कमर पर हाथ दिए खड़ा रहा फिर उसने सिर झुकाया और किसी गहरी सोच में पड़ गया। इस बीच धूप निकल आई थी अस्पताल के पिछवाड़े का कूड़ा उठाने के लिए म्यून्सिपल कार्पोरेशन की गाड़ी आ गई थी। कुछ देर बाद वह धीरे-धीरे उस तरफ बढ़ा, जहाँ उसका बोरा पड़ा था।

बोरा कंधे पर डालकर वह अहाते से बाहर निकल आया। चलते समय अब पहली बार उसे छड़ी का सहारा लेना पड़ रहा था। वह छड़ी हालाँकि इतनी मजबूत नहीं थी कि

किसी का सहारा बन सके मगर उसका शरीर भी इतना वजनदार नहीं था कि छड़ी उसे सँभाल न सके।

शाम को जब वह वापस आया, तो उसका बोरा शहर द्वारा त्याग दी गई अनाप-शनाप चीजों से भरा हुआ था। उसने अपना बोरा और छड़ी जमीन पर रख दी और खुद भी पालथी मारकर बैठ गया। प्लास्टिक की थैली में भरे अपने आहार को उसने गोद में रखा और खाना शुरू कर दिया। कुछ देर बाद उसने बाईं आस्तीन से अपना मुँह पोंछा और दाएँ कुल्हे पर हाथ पोंछते हुए खड़ा हो गया फिर उसने एक बीड़ी जलाई और इधर-उधर चहलकदमी करने लगा।

अंतिम कश लेने के बाद उसने बीड़ी एक तरफ फेंक दी और अपने बोरे का मुँह खोलने लगा। आमतौर पर बोरे को उलट देने के बाद वह उन चीजों पर कभी गौर नहीं करता। बोरा उलटते ही वह सीधे माचिस की तीली सुलगाकर उस ढेर में आग लगा देता था लेकिन उस दिन पता नहीं क्यों उसने अपनी छड़ी उठा ली और शहर के विभिन्न घूरों से चुनकर लाई गई चीजों को एक-बार फिल उलट-पुलट कर देखने लगा।

अब हमारी भी यह जिम्मेदारी बन जाती है कि हम भी उन चीजों को गौर से देखें, जिन चीजों को एक संयुक्त ढेर से अलग किया जा रहा है।

रात घिर आई है। चाँद की रौशनी कुड़े के ढेर पर सीधे पड़ रही है। एक छड़ी है, जो बिना किसी भेदभाव के हर तरह की उतरनों और कतरनों और टूटी-फूटी या चलन से बाहर हो चुकी बेकार चीजों को करीने से लगाती जा रही है।

अब एक क्रम बन गया है। सिर्फ यह देखना शेष रह गया है कि उन चीजों के साथ वह कैसा व्यवहार करता है। हालाँकि किसी भी चीज के घूरे तक पहुँच जाने के बाद उसकी ऐसी कोई एहमियत नहीं रह जाती कि उसका कोई उल्लेख किया जाए लेकिन फिलहाल हम यहाँ अपने नायक की मनःस्थिति के साथ चल रहे हैं; जो एक-एक चीज की खबर ले रहा है। चाहे वह प्लास्टिक की गुड़िया हो या बच्चों की छोटी-छोटी चप्पलें या टोपी या चश्मा या नकली बालों का जूड़ा या कंघी या चूड़ी या प्लास्टिक के टूटे-फूटे खिलौने या शैंपू और तेल की खाली शीशी।

वह छड़ी हर चीज को छूकर गुजर गई। केवल प्लास्टिक की गुड़िया के बिखरे हुए बालों को उसने ठीक से सँवारा और उसकी तनिक ऊपर उठी हुई फ्राक को घुटनों तक फैलाया, छोटी-छोटी चप्पलों को भी उस छड़ी ने एक-दूसरे से सटाकर ऐसे रखा, जैसे वे कोई लावारिश चप्पलें न हो। नकली बालों के जूड़े में गुँथी हुई चोटी भी बहुत बुरी तरह

से उलझ गई थी। छड़ी ने बड़े धैर्य से उन उलझनों को सुलझाया और चोटी को उसकी सम्मानजनक अवस्था में ला दिया।

अंत में छड़ी वहाँ रुक गई, जहाँ एक बदरंग चोली पड़ी थी। उस चोली में अब हालाँकि किसी भी तरह की कशिश या कसावट नहीं थी लेकिन छड़ी ने उस चोली को ऊपर उठा लिया, वह कुछ देर गौर से उसे देखता रहा।

"क्या तुम्हारा भी यही खयाल था कि मैंने तुम्हारी जिंदगी खराब कर दी?"

उसने चोली से मुखातिब होकर कहना शुरू किया,

"मैं सच कह रहा हूँ मैंने जान-बूझकर कभी किसी को त्रास नहीं दिया - मैं नहीं जानता था कि उस वक्त मेरे साथ क्या हो रहा था... लेकिन एक दिन सब को मालूम हो जाएगा कि सच्चाई क्या है..."

वह बहुत देर तक बोलता रहा, उसका एकालाप बहुत धाराप्रवाह था। उसमें उन मजबूरियों और कठिनाइयों का जिक्र था, जो अब इतनी पुरानी और इतनी सामान्य हो चुकी है कि किसी की भी उसमें कोई रुचि नहीं बची है। लेकिन उसे इस बात से कोई मतलब नहीं था कि कोई उसकी बातों को सुन रहा है या नहीं। उस वक्त उसकी सोच और उसकी जुबान के बीच कोई फासला नहीं था।

"अच्छा! चलो अब तुम ही बताओ कि एक बहुत ज्यादा धुआँ राख और खतरनाक गैस उगलने वाली गैरकानूनी फैक्ट्री में काम करने वाला आदमी अगर किसी दिन बीमार पड़ जाए और फिर काम के दौरान चक्कर आने के कारण उसकी काम से छुट्टी कर दी जाए तो इसमें उसका क्या दोष है? महीनों तक इलाज करवाने के बाद भी अगर उसका शरीर साथ न दे और वह छोटी-मोटी नौकरी करने लायक भी न रहे और मजबूरन अगर वह छोटी-मोटी चोरी करने लगे तो उसमें बुराई क्या है? और चोरी पकड़ में आने के बाद अगर उसकी थोड़ी-बहुत पिटाई होती है तो उसमें शर्मिंदा होने या बुरा मानने की क्या जरूरत है? मैंने तुम्हें कई बार समझाया मगर तुम तो बस हर बात का रोना लेकर बैठ जाती थी। 'मेरा क्या होगा... बच्चों का क्या होगा... अरे भाई! टसुए बहाने से काम नहीं चलता आदमी को घर चलाने के लिए कुछ न कुछ करते रहना पड़ता है।"

इतना कहने के बाद वह कुछ देर वह गंभीरता से अपनी बाईं तर्जनी से ठुड्डी खुजाता रहा, फिर बहुत निराशाजनक ढंग से सिर हालते हुए कहा। "इतना सब हो जाने के बावजूद मैंने हिम्मत नहीं हारी, लेकिन तुमने..."

उसका वाक्य अधूरा रह गया जैसे किसी ने बीच में रोक दिया हो। उसने पलटकर पीछे देखा और देखता ही रह गया उसने दाएँ से बाएँ सिर हिलाया जैसे अपने सामने खड़ी भीड़ को देख रहा हो। कुछ देर तक वह अपनी कमर पर हाथ दिए चुपचाप खड़ा रहा फिर उस अदृश्य हस्तक्षेप करने वाले से मुखातिब हुआ,

"देख भाई। जो होना था वो हो गया, होनी को कौन टाल सकता है। जितना मेरे बस में था उतना मैंने किया। लेकिन एक समय ऐसा आ ही जाता है जब कोई चीज इनसान के बस में नहीं रहती और वह चाहे तो भी..."

वह फिर बोलते-बोलते रुक गया जैसे फिर उसकी बात किसी ने काट दी हो। उस छोटे-से वक्फे में वह बार-बार मुंडी हिलाकर असहमति व्यक्त करता रहा, जैसे उस पर लगाए जा रहे आरोपों का खंडन करना चाहता हो।

"नहीं नहीं ये बात बिल्कुल गलत है... मैं अपनी खामियों को छुपाने के लिए किस्मत को दोष नहीं दे रहा हूँ। मैं मानता हूँ कि मैं अपने घर बार को ठीक से सँभाल नहीं पाया और इस बारे में ज्यादा कुछ बताने की जरूरत भी नहीं है। तुम सब अच्छी तरह जानते हो कि इस बस्ती में अक्सर कुछ लोगों के साथ ऐसा हो जाता है। उन्हें या तो किसी नशे की लत लग जाती है या कोई ऐसी बीमारी लग जाती है, जो लंबे समय तक उनका पीठा नहीं छोड़ती, फिर एक दिन वे अचानक उठा-पटक करने लगते हैं या गालियाँ बकने लगते हैं या जोर-जोर से हँसने लगते हैं या बिल्कुल चुप हो जाते हैं..."

उसकी इस बात पर भीड़ में निश्चित रूप से तीखी प्रतिक्रिया हुई होगी। वह बहुत विचलित हो गया और कभी इसको तो कभी उसको समझाने की कोशिश करने लगा लेकिन कोई उसकी बात सुनने को तैयार नहीं था।

आखिरकार उसने अपने दोनों हाथ ऊपर उठा दिए, जैसे किसी उत्तेजित जनसमूह को शांत करने के लिए कोई महानायक या आत्म-समर्पण करने वाला कोई अपराधी अपने हाथ उठा देता है।

वह कुछ देर यूँ ही हाथ उठाए खड़ा रहा। चाँद उसके ठीक पीछे था। उसकी परछाई इतनी लंबी थी कि उठे हुए हाथ अहाते की घेरेबंदी तक पहुँच गए थे। उसके उन उठे हुए हाथों के बीच एक दुनिया थी, जो उससे जवाब माँग रही थी। लेकिन न तो वह कोई अपराधी था, न महानायक। उसने किसी को कोई जवाब नहीं दिया।

कुछ देर बाद उसने अपने हाथ गिरा दिए। फिर पलटकर जमीन पर पड़ी अपनी छड़ी को देखा। छड़ी की नोंक पर वह चोली अभी तक फँसी हुई थी। उसने छड़ी को उठा लिया और चोली को छड़ी से अलग कर अपनी छाती से लगा लिया। और धीरे-धीरे चलते हुए अस्पताल की उस दीवार तक जा पहुँचा, जिस दीवार से पीठ टिकाकर वह बैठे-बैठे रात गुजारा करता था।

रात चाहे कितनी भी गहरी क्यों न हो, पर उसे नींद कभी नहीं आती थी। सिर्फ सपने आते थे। उस चोली के दोनों उभार वाले हिस्सों को उसने अपने घुटनों पर अच्छी तरह से जमाया और बहुत प्यार से उसे सहलाने लगा। जैसे वह चोली न हो किसी के गाल हों। उन कल्पित गालों में सचमुच का स्पंदन ला सकने में उसकी अँगुलियाँ समर्थ थीं।

जिस स्त्री के गालों को वह सहलाता है वह स्त्री अपने बीमार पति और छोटे-छोटे बच्चों की खातिर न जाने कहाँ कहाँ खटती रहती है। इसलिए उसे आने में अक्सर थोड़ी देर हो जाती है। लेकिन किसी न किसी तरह वह आ ही जाती है। वह स्त्री हालाँकि मर चुकी है लेकिन फिर भी वह उसे बुलाता रहता है और यह बुलावा अक्सर इतना शदीद और इतना जीवंत होता है कि कोई भी चीज उस स्त्री को फिर से जीवित होने से रोक नहीं पाती।

रात का जब दूसरा पहर बीत रहा था तब उसे अहाते के उस हिस्से में एक आहट सुनाई दी। उसने सिर उठाकर देखा, दीवार के उस टूटे हिस्से के पास एक औरत खड़ी थी। वह बहुत दुबली-पतली और साधारण-सी औरत थी, जो हाथ में एक पोलिथीन का कैरीबैग लिए उसकी तरफ कुछ ऐसी उतावली से बढ़ी जा रही थी, जैसे काम पर जाने की जल्दी में हो या काम निपटाकर घर वापस जाने की जल्दी में हो। उसके पास आकर उस औरत ने अपने प्लास्टिक के थैले को जमीन पर रख दिया। और बिना कुछ कहे उसका हाथ पकड़कर उसे खड़ा कर तिया। फिर वह उसकी कमीज के बटन खोलने लगी। कमीज उतारने के बाद वह उसकी मैली-कुचैली, कीचड़ और मल-मूत्र से सनी पतलून को उसके शरीर से छुड़ाने के प्रयास में जुट गई। उनकी पतलून कमर के साथ रस्सियों के कई टुकड़ों और फीतों से बँधी हुई थी। वे रस्सी के टुकड़े और फीते आपस में इतने उलझे हुए थे और उसें पड़ी हुई गाँठें इतनी गंदी और चिकनाई से सनी हुई थी कि कोई बहुत धीरजवाली अनुभवी औरत ही उसे खोल सकती थी। उसने बहुत सहजता से, जैसे उसे यह काम करने की पुरानी आदत हो, अपने नाखूनों और दाँतों से खींचकर गाँठें ढीली की, रस्सियों और फीतों को कपड़ों से छुड़ाया और पतलून को नीचे सरक जाने दिया। फिर उसने अपने प्लास्टिक थैले से एक गीला तौलिया निकाला और पहले उसके चेहरे को; फिर उसके पूरे बदन को पोंछने लगी। फिर उसने उसके

विभिन्न जख्मों का मुआयना किया और थैले से मरहम पट्टी निकाली और घावों को रूई के फाहों से पोंछकर फटाफट उसमें मरहम पट्टी लगा दी। और थैले से धुले हुए साफ कपड़े निकालकर उसे पहनाने लगी। कमीज के बटन लगाते समय वह उसे तरह-तरह की हिदायतें दे रही थी मगर वह उसकी बातें सुनने के बजाय सिर्फ उसे देख रहा था।

फिर वह औरत तुरंत चली गई। इतनी तत्परता से, मानो वह कोई काम वाली बाई हो, जो एक साथ कई घरों में काम करती है। जिसे सब काम फटाफट निपटाने की आदत पड़ जाती है। काम पूरा कर के जाते समय वह मुड़कर यह भी नहीं देखती कि जो काम उसने किया है, वह ठीक तरह से पूरा हुआ है या नहीं। वे यांत्रिक ढंग से काम करने की इतनी आदी हो जाती है कि कोई भी काम उसके लिए विशेष या अलग नहीं रह जाता। उनका चेहरा भावहीन तथा हाथ कड़े और खुरदरे हो जाते हैं, ऐसे हाथ, जो सिर्फ दैनिक क्रियाओं को दोहराते रहते हैं या उनके हाथों में आते ही कोई भी काम एक मामूली दैनिक क्रिया में बदल जाता है।

औरत के जाने के बाद वह बहुत देर तक दीवार के उस टूटे हिस्से को देखता रहा। फिर उसने अपने उन कपड़ों को देखा जो उस औरत के जाते ही फिर उतने ही गंदे और बदबूदार हो गए थे। फिर उसने अपने उन खुले जख्मों को देखा जो उस क्षणिक आभासी उपचार के बावजूद अपने पीले पड़ते किनारों के साथ उतने ही सुजे हुए और भरावदार थे। उसने अपने टखने के घाव को धीरे से कहलाया, जैसे घाव को नहीं उस सुख को छू रहा हो, जिस सुख ने कुछ ही देर पहले उसके घाव पर जन्म लिया था। वह घाव को नहीं औरत की अँगुलियों के उस स्पर्श को सहला रहा था। कुछ देर बाद जब टखने के घाव से उसका मन भर गया तो सिर के पिछले हिस्से के घाव को उसने छुआ, जो अब फैलकर बड़ा भी हो गया था और गहरा भी। लगभग दो इंच गहरे उस घाव की अंदरुनी गहराई में जाकर उसकी तर्जनी न जाने किस नुक्ते को कुरेदती रहती है। लेकिन वह नुक्ता उसे किसी भी हालत में जी सकने की मनुष्य की जिजीविषा के बारे में कुछ सोचने के लिए कभी प्रेरित नहीं करता; मौजूदा समय में मनुष्य की स्थिति जैसी बातों पर चिंतन करने का तो सवाल ही नहीं उठता। उसके दिमाग में यह खयाल भी नहीं आता कि इतने गहरे घाव में कोई ऐसी बात भी हो सकती है, जिसे व्यवस्था के सामने एक सवाल की तरह पेश किया जा सके।

देखते-ही देखते तीसरा पहर बीत गया और कुछ देर बाद परिंदों की हल्की आवाजें सुनाई देने लगी। फिर आकाश के पूर्वी किनारे से काले बादलों के पीछे सुनहरी चमक उभरने लगी। वह शांत और स्थिर चित्र था। कुछ देर वह आसमान को देखता रहा फिर

अपनी छड़ी और बोरा उठा लिया। इस बार खड़े होने में उसे ताकत लगानी पड़ी, ऐसा लग रहा था कि अब उसके शरीर में एक कदम भी चलने की ताकत नहीं है। जो कुछ भी संभव था, वह केवल दिमाग के निर्देश पर निर्भर था।

उसके कदम एक बार फिर उसी दहन स्थल की तरफ बढ़ने लगे, राख से भरे उस गड्ढे के पास जाकर वह बैठ गया। कुछ देर यूँ ही बैठा रहा। जैसे श्मशान में अग्निसंस्कार के बाद दूसरे दिन हम अपने स्वजनों की चिता की राख को छूते हैं, ठीक वैसे ही उसने राख को छुआ। उसकी कल्पना शक्ति और उसकी सोच अब उतनी ही थक गई थी जितना वह। उसे अब बिल्कुल मालूम नहीं था कि उसे क्या करना है। वह तो सिर्फ अपने भीतर से आ रहे अज्ञात संदेशों का पालन कर रहा था। उसने अपने बोरे का मुँह खोला और बाएँ हाथ की हथेली से राख उलीचकर बोरे में भरने लगा। इतने सम्मानजनक ढंग से, जैसे वह किसी कुड़े-कचरे की राख न हो बल्कि चिता की राख हो।

उसकी बड़बड़ाहट एक बार फिर शुरू हो गई। लेकिन इस बार वह आग से नहीं राख से मुखातिब था, जिस हाथ से वह राख उलीच रहा था, उसी हाथ की लंबी आस्तीन से अपनी आँखों पोंछते हुए वह बोले जा रहा था, "बहुत बुरी बात है..." उसने राख से शिकायत भरे लहरे में कहा, "तुमने आखिर कुछ कहा क्यों नहीं? क्या मुझसे बहुत ज्यादा नाराज थी? क्या मेरे ऊपर जरा भी भरोसा नहीं रह गया था? कुछ बता दिया होता तो अच्छा होता... मुझे क्या मालूम था कि तुम क्या सोच रही थी और क्या करने वाली थी..."

एक बार फिर उसने नाक साफ की, आँसू पोंछे और भर्राई हुई आवाज में बोला, "कुछ कहा न सुना... बस बच्चों को गोदी में बिठाया और मिट्टी तेल छिड़क लिया..."

उसने राख से सने अपने दोनों हाथों से अपना चेहरा ढँक लिया और कुछ देर ऐसे सिर हिलाता रहा जैसे किसी गहरे पश्चाताप से गुजर रहा हो। फिर चेहरे से हाथ हटाकर उसने राख से भरे हुए बोरे को देखा। फिर एक गहरी साँस लेकर खड़ा हो गया फिर अपने दोनों हाथों की ताकत लगाकर बोरे को भी खड़ा कर दिया और रस्सी से उसका मुँह बाँधने लगा। बोरा हालाँकि बहुत वजनदार था और उसका भार उससे सँभल नहीं रहा था फिर भी उसने बोरे को पीठ पर लाद लिया और आगे बढ़ गया, अपने उस स्वनिर्मित दहन स्थल को पीछे छोड़कर, जिसमें अब एक भी चिनगारी बची नहीं रह गई थी।

अहाते से बाहर कदम रखने से पहले उसने एक बार मुड़कर उस पूरे अहाते पर एक विस्तृत नजर डाली। कुछ इस तरह कि जैसे सदा के लिए जा रहा हो, कि अब फिर कभी वापस लौटकर आने की कोई गुंजाइश ही न हो।

अस्पताल के पिछवाड़े से बाहर आकर वह शहर की तरफ जाने वाली मुख्य सड़क पर आ गया। उसके फटे-पुराने बोरे ने कई दिनों तक उसका साथ दिया था लेकिन गुजरते दिनों के साथ-साथ वह भी जर्जर होता चला गया था। जूट के ताने-बाने ने कहीं-कहीं एक-दूसरे का साथ छोड़ दिया था और उन कमजोर हिस्सों से राख गिरती जा रही थी। बढ़ते हुए हर कदम के साथ राख का रिसाव भी बढ़ता जा रहा था।

काली राख की यह रेखा कोई प्रतीक नहीं है। यह महज एक इत्तफाक है। इस दुनिया में और भी तो कितने इत्तफाक होते हैं। इसलिए राख के इस रेखांकन का कोई और अर्थ नहीं निकाला जाना चाहिए। क्योंकि महानगर के सीने पर यह राख किसी कलात्मक उद्देश्य से नहीं रची जा रही है।

सड़क पर राख की लंबी लकीर खींचते हुए वह चौराहे तक पहुँच गया। लेकिन अब उसकी बाईं टाँग ने बिल्कुल जवाब दे दिया था। वह कुछ देर दाएँ पैर के बल पर खड़ा रहा। फिर उसके उन हाथों ने भी जवाब दे दिया, जिन हाथों ने बोरे को थाम रखा था, वह बोरा उसके हाथ से फिसलकर धप् की आवाज के साथ चौराहे के बीचोंबीच गिर गया।

अब इक्का-दुक्का वाहनों का आना-जाना शुरू हो गया था। पहले दूध, ब्रेड, अंडे और सब्जियों से भरे डिलिवरी वेन दिखाई दिए, फिर स्कूल बसें और दुपहिया वाहन भी आने जाने लगे।

वह अब भी चौक के बीचोंबीच खड़ा था। उजाला बढ़ता जा रहा था लेकिन उसे आँखों के आगे सिर्फ अँधेरा ही अँधेरा नजर आ रहा था। फिर वह ऐसे गिरा, जैसे कोई पेड़ तब गिरता है, जब उसकी जड़ें उसका साथ छोड़ देती हैं।

लेकिन आखिरकार वह इनसान था। कुछ देर वह पेट के बल पड़ा गहरी-गहरी साँस लेता रहा। फिर जैसे-तैसे उठ बैठा। कुछ देर तक वह मुँह उठाकर इधर-उधर देखता रहा, जैसे उसे समझ में न आ रहा हो कि वह कहाँ है। फिर उसकी चेतना धीरे-धीरे सक्रिय हुई। उसने अपने दोनों हाथ जमीन पर टिकाए और शरीर का पूरा भार हाथों पर डालकर अपने शरीर को खिसकाया। फिर दूसरी बार उसने अपनी ताकत को आजमाया फिर तीसरी बार फिर चौथी बार... और इससे पहले कि ट्रेफिक की लाल हरी

बत्तियाँ अपना काम शुरू करती, वह कूल्हों के बल घिसटना सीख चुका था। फुटपाथ पर पहुँचने के बाद उसने एक बार भी उस राख के बोरे को पलटकर नहीं देखा, जो भारी वाहनों के टायर के नीचे पिचक गया था वाहनों की तेज रफ्तार आवा-जाही ने चौराहे पर काली राख का एक बवंडर खड़ा कर दिया था।

लेकिन अब उस आदमी के लिए न तो आग का कोई महत्व रह गया था, न राख का। वह अपनी बाईं टाँग हवा में उठाए कूल्हे के बल ऐसे घिसटता जा रहा था जैसे उसे इस तरह घिसटने का बहुत पुराना अभ्यास हो। फुटपाथ से गुजरते लोग भी उसे बिना देखे ऐसे उसके आस-पास से गुजर रहे थे, जैसे वे भी घिसटते हुए आदमी को बिना देखे उसके करीब से गुजर जाने के अभ्यस्त हों।

अब हम इस कहानी के अंत की ओर बढ़ रहे हैं। जानकार लोग ज्यादा अच्छी तरह बता सकते हैं कि अंत कैसा होना चाहिए। आम राय तो यही बनेगी कि हमारा नायक जल्द से जल्द मर जाए ताकि कहानी को अतिनाटकीय हाने से बचाया जा सके। लेकिन साफ दिखाई दे रहा है कि हमारे नायक का ऐसा कोई इरादा नहीं है। जब से उसने घिसटना सीख लिया है, तब से उसके चेहरे की रंगत बदल गई है। वह चीजों को देखकर मुस्कराता रहता है। अब उसने गाली देना, अफसोस प्रकट करना और बार-बार आँखें पोंछना बंद कर दिया है। अब उसने अपने उस अड्डे पर भी जाना छोड़ दिया है, जहाँ वह पहले चीजों को आग के हवाले करने जाया करता था।

जैसे-जैसे दिन बीतते जा रहे थे, उसकी मुस्कराहट गहरी होती जा रही थी और यह मुस्कराहट उसके लिए बहुत कारगर साबित हो रही थी। चाहे वह शीत लहर हो या गर्मी की तपती धूप या बारिश या कई-कई दिनों की भूख, किसी में इतनी ताकत नहीं थी कि उसके चेहरे से उसकी मुस्कराहट छीन ले।

उसने अब कपड़े पहनना भी छोड़ दिया था अपने कूल्हों पर उसने जुट के एक बोरे का टुकड़ा बाँध रखा था। उसके सहज बोध ने उसे बता दिया था कि अब चूँकि टाँगों की कोई उपयोगिता नहीं रह गई है इसलिए उसे कूल्हों की हिफाजत पर ध्यान देना चाहिए। इतना तो वह कर ही सकता था। बिना किसी की सलाह-सहायता के उसने खुद बोरे को दोहराकर उसके चारों कोनों को चार अलग-अलग रस्सी के टुकड़ों से बाँधना और उसे अपने कुल्हो के नीचे रखकर रस्सी के अगले सिरे को अपनी कमर से लपेटकर एक-दूसरे से गाँठ-बाँधकर जोड़ना सीख लिया था।

पहले तो वह अपने कूल्हों के नीचे जूट के बोरे की गद्दी लगाए बड़ी आसानी से फुटपाथों में घूमता-फिरता रहता था और सड़क पार करने में भी उसे कोई परेशानी

नहीं होती थी। रेड सिग्नल के दौरान चौराहे के जेब्राक्रास को भी वह अचूक टाइमिंग के साथ पार कर लेता था इसलिए शहर के यातायात में कोई अवरोध नहीं आता था लेकिन धीरे-धीरे उसकी गति कम होने लगी। अब वह समय रहते सड़क को पार नहीं कर पाता था। ग्रीन सिग्नल मिलते ही जब चौराहे के एक तरफ खड़े सारे वहान एक साथ एक-दूसरे से आगे निकल जाने की फिराक में आगे बढ़ते तो इस अवांछित अवरोध से उसका संतुलन बिगड़ जाता।

आखिरकार उसने सड़क पर उतरना बंद कर दिया। वह अब सिर्फ फुटपाथ पर ही दिखाई देता था लेकिन कुछ दिनों बाद फुटपाथ पर भी यही दिक्कत होने लगी वह जब तक धीरे-धीरे घिसटता रहता, तब तक किसी को कोई एतराज नहीं होता था लेकिन ताकत चुक जाने के कारण वह थोड़ी देर कहीं ठहर जाता तो उसके शरीर से उठती मल-मूत्र की दुर्गंध और उसके घावों पर भिनभिनाती मक्खियों से आस-पास के दुकानदार और ग्राहक परेशान हो जाते।

फिर एक बार उसे उसके सहज बोध ने समझाया कि अब उसे इन भीड़ भाड़ वाले फुटपाथों को भी छोड़ देना चाहिए क्योंकि अब उसके कूल्हों और हाथ के पंजों ने भी जवाब देना शुरू कर दिया था। पिछले कुछ दिनों से वह अपनी दाहिनी कोहनी के बल पर घिसटने लगा था।

फिर एक दिन उसने अपनी उसी कोहनी के बल पर अपने धड़ को फुटपाथ से नीचे उतारा और शरीर के उस निचले और निर्जीव हिस्से को घसीटते हुए रेलवे स्टेशन के पश्चिमी द्वार से थोड़ी दूर बने एक घूरे की तरफ बढ़ने लगा। रेलवे स्टेशन के परिसर के आखिरी छोर तक, जहाँ मध्य रेलवे की एक लंबी दीवार घूरे से जा मिली थी। घूरे से दस हाथ की दूरी पर वह रुक गया। फिर उसने अपनी पोजिशन बदली और दीवार से अपनी पीठ टिक कर एक ऐसी साँस ली, जैसे किसी बहुत ही महत्वपूर्ण पड़ाव पर पहुँच गया हो।

उस घूरे के ठीक सामने सब्जी मंडी और मटन मार्केट था जहाँ से तमाम मुर्झाई हुई सब्जियाँ, सड़े गले आलू-प्याज और फल और मुर्गियों के पंख, उसकी गर्दनें और पंजे और अँतड़ियाँ तथा मछलियों के गलफड़े और उसके गैर-जरूरी हिस्से ला लाकर इसी घूरे में फेंक जाते थे।

उस जगह को चुन लेने के पीछे सिर्फ एक ही कारण था - वहाँ कव्वों, कुत्तों और लावारिश मवेशियों के अलावा कोई नहीं आता था और उन परिंदों और परिंदों को वहाँ उस मनुष्य की उपस्थिति से कोई एतराज नहीं था। वे सब चरिंदे और परिंदे उस

आदमी से निरपेक्ष अपने पंजों या खुरों से कूड़ा कुरेदने और चोंच मारकर या थूथन घुसेड़कर अपना आहार चबाने और निगलने में व्यस्त रहते थे और वह उन्हें देखकर मुस्कराता रहता था।

देखते ही देखते गर्मी का मौसम भी बीत गया फिर आसमान पर काले बादल छाने लगे फिर मानसून की पहली बारिश हुई और बाद के दिनों में भी बारिश बार-बार शहर को भिगोती रही।

जब कई-कई दिनों तक बादल छाए रहते हैं और बूँदा-बाँदी भी जारी रहती है, तब हर चीज सड़ने लग जाती है और घूरा इतनी बुरी तरह से गंधाता है कि आदमी पागल हो जाए। लेकिन जो लोग पहले से ही इस तरह की बदबूदार गिलगिली गलाजत को सहने के आदी हो चुके होते हैं, उन्हें यह गंध गजब की कल्पना शक्ति से भर देती है। उन्हें इतने सुंदर विचार आते हैं, जो किसी सामान्य आदमी को आ ही नहीं सकते क्योंकि उनका कुछ सोचना दरअसल सोचने जैसा नहीं होता। बल्कि उन्हें लगने लगता है कि कुछ हो रहा है - कुछ और, जो पहले कभी नहीं हुआ, उन्हें कुछ सुनाई देने लगता है, एक ऐसी पदचाप जो पहले कभी सुनाई नहीं दी थी। उन्हें लगता है कि कोई सुंदर और पवित्र चीज धीरे-धीरे उसके पास आ रही है। और उसे करीब आते देख उनका दिल खुशी से भर उठता है, उनकी आँखों में एक अलग तरह की अव्याख्येय चमक उभर आती है।

हमारे नायक के साथ भी यही हुआ। उसे भी पदचाप सुनाई दी, उसने भी किसी सुंदर और पवित्र चीज को अपने करीब आते देखा, उसका भी दिल खुशी से भर उठा लेकिन जैसे ही वह चीज उसके बिलकुल पास आई, वह धीरे से मुस्कराया और इनकार में सिर हिला दिया।

https://www.hindiadda.com/aag-aur-raakh-ke-beech/